हिंसा के साए में

झारखंड की करनपुरा कोयला खदानों के प्रति एनटीपीसी लिमिटेड का दायित्व

द रिसर्च कलेक्टिव

पब्लिक फाइनेंस एंड पब्लिक एकाउंटेबिलिटी कलेक्टिव

फ़रवरी 2021

द रिसर्च कलेक्टिव, प्रोग्राम फॉर सोशल एक्शन की शोध इकाई है, जो विकास, उधोग, दीर्घकालीन विकल्प, समान वृद्धि, प्राकृतिक संसाधन, समुदाय और जन अधिकार के सैद्धांतिक ढांचों और व्यावहारिक पहलुओं पर रिसर्च को संचालित करता है | अर्थशास्त्र, कानून, राजनीती, पर्यावरण और सामाजिक विज्ञान जैसे विभन्न विषयों को समेटते हुए, उसका काम लोगों के अनुभवों और समुदाय के परिप्रेक्ष्य पर आधारित होता है | हमारे काम का मकसद है जमीनी हकीकत को प्रतिबिम्बित करना, विनाशकारी विकास के प्रतिमानों को चुनवती देना तथा सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक पर्यावरण सम्बन्धी और सांस्कृतिक मामलों को लेकर जानकारी पर आधारित बहस को जन्म देना।

पब्लिक फाइनेंस एंड पब्लिक एकाउंटेबिलिटी कलेक्टिव (पीएफपीएसी): पीएफपीएसी का उद्देश्य नागरिक समाज, कार्यकर्ताओं और जमीनी आंदोलनों के लिए सार्वजनिक वित्तीय पारिस्थितिकी तंत्र का एक चित्रमाला प्रदान करना है। यह कार्यशालाओं और प्रशिक्षण सत्रों के माध्यम से इन वर्गों की क्षमता निर्माण में भी मदद करता है।

शोध और लेखन: डॉ० उत्कर्ष कुमार और डॉ० हिमांशु दामले

निर्देशन: अस्वित सेनन, अरुण मोहन और आशिमा सब्बरवाल

अनुवाद : सिद्धार्थ जोशी, अभिन्यास: अयाज़ अहमद

प्रकाशक: जेएसए इंटरप्राईजेज

प्रकाशक: द रिसर्च कलेक्टिव-पीएसए और पीएफपीएसी

फ़रवरी 2021

केवल निजी वितरण हेतु

सहयोग राशि: 20 रुपये

प्रतियों के लिए संपर्क करें:

प्रोग्राम फॉर सोशल एक्शन

G46, प्रथम तल, ग्रीन पार्क (मेन)

नई दिल्ली- 110016

फ़ोन नंबर: +91-11- 26561556

ईमेल: : trc@psa-india.net

हिंसा के साए में: झारखंड की करनपुरा कोयला खदानों के प्रति एनटीपीसी लिमिटेड का दायित्व

अंग्रेजी रिपोर्ट Slow Violence: Maharatna NTPC Ltd Liability at North Karanpura Coal Fields of Jharkhand के कार्यकारी सारांश का हिंदी अनुवाद

कार्यकारी सारांश

2020 के अधिकांश हिस्से के दौरान, भारत कोविड-19 महामारी, लागू किये गए कड़े लॉकडाउन तथा बिना किसी योजना के अव्यवस्थित रूप से लॉकडाउन को खोलने की प्रक्रिया से जूझता रहा है। जून 2020 में, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मौके का फायदा उठाते हुए, यह घोषणा की कि उनकी सरकार ने पांच दशकों से लॉकडाउन में बंद कोयला खनन को आज़ाद करने का फैसला किया है जिसके तहत व्यावसायिक (मुनाफे के लिए) कोयला खनन को अब निजी कंपनियों के लिए खोल दिया जाएगा और जो कंपनियां नीलामी में सबसे ज़्यादा बोली लगाने में सफल रहेंगीं, उन्हें इस कोयले को दुनिया की किसी भी कंपनी को बेचने का अधिकार होगा। भारत सरकार ने निजी इकाइयों के लिए 41 कोयला खदानों की नीलामी की प्रक्रिया शुरू कर दी जिसमें से झारखंड में 2020 में 9 तथा 2021 में 67 कोयला खंड हैं। झारखंड राज्य सरकार ने इस कदम के खिलाफ एक याचिका दायर की है जिसमें कहा गया कि इससे "अयोग्य, मिलीभगत और गुटबंदी वाली, प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवस्था को प्रवेश और बढ़ावा" मिलेगा। नीलामी की प्रक्रिया की रूपरेखा जिस तरह से तय की गयी है, उसके अनुसार अगर निजी कंपनियों को आर्थिक लाभ होता है तो राज्यों को नुकसान होगा। "हिंसा के साए में: झारखंड की करनपुरा कोयला खदानों के प्रति एनटीपीसी लिमिटेड का दायित्व" शीर्षक वाली यह रिपोर्ट झारखंड स्थित बिंदाराई इंस्टिट्यूट फॉर रिसर्च स्टडी एंड एक्शन (बिरसा), झारखंड खनन क्षेत्र समन्वय समिति (जेएमएसीसी) और करणपुरा बचाओ संघर्ष समिति (केबीएसएस) के व्यापक समर्थन के साथ द रिसर्च कलेक्टिव और पब्लिक फाइनेंस पब्लिक एकाउंटेबिलिटी कलेक्टिव, दिल्ली द्वारा संयुक्त रूप से प्रकाशित की जा रही है। यह रिपोर्ट कंपनी के उन वित्तीय, सामाजिक, पर्यावरणीय और सांस्कृतिक उल्लंघनों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत करती हैं जिनका ख़ामयाज़ा उत्तर करणपुरा के लोगों को भुगतना पड़ रहा है। यह रिपोर्ट दर्शाती है कि किस तरह महारत्न कंपनी एनटीपीसी और

उसकी खनन विकासक और ऑपरेटर (एमडीओ) कंपनी त्रिवेणी सैनिक ने इस क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक-पर्यावरणीय ताने-बाने को ताक पर रखकर, झारखंड के उत्तर करणपुरा खनन क्षेत्र के निवासियों के जीवन और रोज़गार को गहरा आघात पहुँचाया है।

पृष्ठभूमि

पिछले कई दशकों से देश के बिजली उत्पादन में कोयले का एक बड़ा योगदान रहा है, जबकि कई देशों में बिजली पैदा करने के लिए नवीकरणीय स्रोतों (ऐसे स्रोत जिन्हें फिर से बहाल किया जा सकता है) को बढ़ते पैमाने पर अपनाया जा रहा है। दिसंबर 31, 2015 को नीति आयोग द्वारा जारी की गई विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट के अनुसार, भारत सरकार का साल 2022 तक 175 गीगावाट नवीकरणीय ऊर्जा पैदा करने की क्षमता स्थापित करने का लक्ष्य है। इसका मतलब है कि देश में बिजली उत्पादन के लिए ज़मीन और संसाधनों के इस्तेमाल में बदलाव लाना होगा। कोयला-आधारित ऊर्जा उत्पादन से दूर जाने की यह बदलाव की प्रक्रिया धीमी होने वाली है। कोयला खदानों को बंद करना, बहुत ही सावधानी से और नियमों के तहत की जाने वाली प्रक्रिया है जिसे सुनियोजित रूप से किया जाना चाहिए। इसके तहत खनन क्षेत्र के पुनर्वास, खनन से जुड़े रोज़गार के नुकसान, सामजिक विस्थापन, लोगों के जीवन पर इसके पड़ने वाले प्रभाव, खासतौर पर आदिवासियों और दलितों के जीवन पर, ऊर्जा उत्पादन की पूरी प्रक्रिया के दौरान उन्होंने क्या पाया और क्या खोया, और भविष्य में इसका क्या प्रभाव होने वाला है, इन सभी के लिए प्रावधान होने चाहिए। जीवाश्म ईंधनों (कोयला, पेट्रोल आदि) के मुकाबले पर्यावरण के लिए बेहतर मानी जानी वाली हरित तकनीकों की ओर बढ़ने की इस प्रक्रिया के बारे में बात करते वक़्त हमें इन सभी आयामों को ध्यान में रखना चाहिए। सामाजिक-आर्थिक ज़िम्मेदारियों और पर्यावरणीय ज़रूरतों का भी संज्ञान लेना होगा और इन सभी से खदानों को बंद करने की लागत कई गुना बढ़ जाएगी।

जहाँ सार्वजनिक उद्देश्य का सवाल आता है, सरकारी इकाई होने के नाते एनटीपीसी के साथ अक्सर काफी नरम व्यवहार किया जाता है जबकि एनटीपीसी द्वारा किये गए भूमि अधिग्रहण, पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास नीतियों और सामाजिक-आर्थिक व पर्यावरणीय जोखिमों से जुड़े उल्लंघनों को नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है। यह रिपोर्ट इन्ही उल्लंघनों का खुलासा करने की एक कोशिश है।

अध्ययन का उद्देश्य

एनटीपीसी लिमिटेड (पहले राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम के नाम से जानी जाती थी) भारत सरकार की इकाई है जिसे 2005 में 'महारत्न' का दर्जा दिया गया था। वर्ष 1975 में स्थापित सार्वजनिक क्षेत्र की इस कंपनी द्वारा फिलहाल 53 उप-इकाइयां का संचालन किया जा रहा है, और भारत के बिजली उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा एनटीपीसी से आता है। एनटीपीसी ताप-आधारित बिजली पैदा करने वाली देश की अग्रणी कंपनी है, जो इसके लिए जीवाश्म ईंधन के रूप में कोयले का इस्तेमाल करती है। हालांकि एनटीपीसी लिमिटेड को सरकारी सहायता मिलती रहती है, लेकिन 2004 में कंपनी के आईपीओ (प्रारंभिक सार्वजनिक प्रस्ताव) के तहत सरकार ने 5.25% शेयर बेचने का प्रस्ताव रखा था। यह लिखे जाने के वक़्त, कई दौर के विनिवेश (शेयर की बिक्री) के बाद भारत सरकार के पास अब एनटीपीसी के 56.41% शेयर ही रह गए हैं। अगस्त 2019 में एनटीपीसी ने एनटीपीसी खनन नियमित नाम की सहायक कंपनी के पंजीकरण के साथ व्यावसायिक खनन में प्रवेश करने की घोषणा कर दी। इस कोयला खनन इकाई का मुख्य उद्देश्य एनटीपीसी की खुद की ज़रुरत पूरी होने के बाद खदानों के बचे हुए अतिरिक्त कोयले को खुले बाजार में दूसरों को बेचना था।

2003 में, एनटीपीसी को झारखंड के हज़ारीबाग जिले में कोयला खनन के लिए भूमि आवंटित की गई थी। एनटीपीसी को 10 कोयला खंड आवंटित किये गए हैं: पकरी-बरवाडीह,

चट्टी बरियातू (चट्टी बरियातू-दक्षिण सहित), केरेदारी, दुलंगा, तलाईपल्ली, भालुमुदा, बनई, मंदाकिनी-बी, बनारडीह (एक सहायक कंपनी पतरातू विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड को आवंटित) और बदम खंड जिनमें 370 करोड़ टन से भी अधिक भूवैज्ञानिक भंडार और लगभग 11.3 करोड़ टन प्रति वर्ष की उत्पादन क्षमता का अनुमान लगाया गया है। पकरी-बरवाडीह के कोयला खंड में, जहां उत्तर करणपुरा की खदानें हैं, वहां त्रिवेणी सैनिक नाम के निजी खनन विकासक और ऑपरेटर (एमडीओ) की सक्रिय भूमिका की वजह से व्यावसायिक खनन शुरू भी किया जा चुका है। अंत में पकरी-बरवाडीह की खदानों में खनन कार्य अक्टूबर 2016 में पूरे पुलिस बंदोबस्त की मौजूदगी में शुरू हुआ क्योंकि भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया अभी भी जारी थी। एनटीपीसी की झारखंड के हज़ारीबाग में स्थित पकरी-बरवाडीह खदानों में उत्पादन जनवरी 1, 2017 को शुरू हुआ, और अप्रैल 1, 2019 को इसे व्यवसायिक उत्पादन घोषित कर दिया गया है। क्योंकि खनन की प्रक्रिया अब व्यावसायिक स्तर तक पहुँच चुकी है, यह अध्ययन उन आंदोलनों के लिए उदाहरण पेश करने की एक कोशिश है जो अन्य क्षेत्रों में कोयला खनन का विरोध कर रहे हैं। इस रिपोर्ट में निम्नलिखित मुद्दों की पड़ताल करने की कोशिश की गयी है:

1. बिजली उत्पादन के नाम पर कंपनियों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के शोषण और भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया का खुलासा करना
2. कई कानूनी और पर्यावरणीय दिशानिर्देशों के उल्लंघन
3. दुनिया भर में नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोतों के बढ़ाते इस्तेमाल के रुझान के विपरीत भारत में कोयला खनन और ताप-आधारित बिजली उत्पादन की इस होड़ को समझना
4. व्यापक स्तर पर कोयला खनन के ग्रामीण आबादी पर, विशेष रूप से खेतिहर आबादी के जीवन पर होने वाले प्रभावों का मूल्यांकन

5. सरकार और कंपनी के साथ मिलीभगत के चलते पुलिस और अन्य सुरक्षा बलों द्वारा किये गए ग्राम वासियों के मानवाधिकारों के उल्लंघनों को रेखांकित करना
6. खनन के कारण होने वाले भूमि और नदियों जैसे उन प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी को उजागर करना जिन पर लोग अपने रोज़गार के लिए निर्भर हैं और खुलेआम हो रहे इस शोषण की वजह से किस तरह से कुछ लोग कंपनी के साथ समझौता करने के लिए मजबूर हो गए हैं
7. कंपनी द्वारा प्रस्तावित पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास पैकेज की वास्तविकता और जो लोग इसकी शर्तों को स्वीकारने से इनकार करते हैं उन्हें किस तरह से प्रताड़ित किया जाता है
8. इस गतिविधि और उससे होने वाले प्रदूषण के लोगों के स्वास्थ्य, वातावरण और सांस्कृतिक जीवन पर होने वाले प्रभाव

यह रिपोर्ट एनटीपीसी को उन लोगों और समुदायों के प्रति जवाबदेह ठहराने का प्रयास है जिनकी ज़िन्दगियों और रोज़गार पर कंपनी की शोषणकारी नीतियों ने बुरा प्रभाव डाला है और जिनकी वजह से इन समुदायों का सामजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय और रोज़गार-संबंधी ताना-बाना तार तार हो गया है। इस अध्ययन का दीर्घकालिक उद्देश्य यह दर्शाना है कि किस तरह से झारखंड राज्य में एनटीपीसी द्वारा किया गया निवेश घाटे का सौदा है और कोयला खंडों का अगर आगे और ज़्यादा निजीकरण किया जाता है तो यह कंपनियों को मौजूदा जवाबदेही और नियमों के पालन की ज़िम्मेदारी से भी मुक्त कर देगा। इस रिपोर्ट में यह भी रेखांकित किया गया है कि देश भर में बन रहे या चालू जीवाश्म-आधारित बिजली संयंत्रों को बंद करने की एनटीपीसी द्वारा हाल में की गई घोषणा और नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में उसकी तेज़ी से बढ़ती मौजूदगी के बावजूद, एनटीपीसी अभी तक हुए नुकसान और नियमों के उल्लंघनों को नज़अंदाज़ कर रही है। इस अध्ययन का उद्देश्य एनटीपीसी के खिलाफ समुदाय

से उठनी वाली प्रतिरोध की आवाज़ों को बुलंद करना है। नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में प्रवेश कर रही एनटीपीसी, अपने पीछे बर्बादी की जो मिसाल छोड़ कर जा रही है, उसके आधार पर उसे जन हितैषी कंपनी तो कतई नहीं कहा जा सकता है।

नवीकरणीय ऊर्जा को अपनाने की कीमत

कोयले से हुई हानि की क्षतिपूर्ति सिर्फ पर्यावरण को हुए नुकसान तक की सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचना को पहुंचे नुकसान का मुआवज़ा भी इसका हिस्सा है। इसमें परियोजना के लिए अधिग्रहित भूमि; विस्थापन और उसके बाद पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास की लागत; समुदायों के रोज़गार के नुकसान के अलावा खनन या कोयला संयंत्र के बंद होने से पैदा हुई बेरोज़गारी और साथ ही साथ कोयला खनन और/या संयत्र में खपत होने वाली ऊर्जा के ऑडिट (लेखा परिक्षण) पर होने वाला खर्च भी शामिल है। इस ऑडिट के तहत पैदा की गयी ऊर्जा के मूल्य और उसे पैदा करने में आई लागत के बीच के फर्क को रेखांकित किया जाना चाहिए। कोयले से हुई हानि की क्षतिपूर्ति का पूरा ढांचा ऊर्जा ऑडिट के वित्तीय विश्लेषण पर आधारित है जो तकनीकी रूप से काफी जटिल होता है क्योंकि इसमें कई आयामों को शामिल करने की जरूरत होती है। चूंकि आने वाली यह लागत और आमदनी का नुकसान, एक बार नहीं बल्कि बार-बार होने वाली प्रक्रिया है, और इनका मूल्य असीमित है, इसलिए इन भावी लागतों और आमदनियों के मौजूदा मूल्य का आकलन करना भी बहुत ज़रूरी है। वित्तीय जोखिम के मूल्यांकन के बारे अस्पष्टता, उत्पादन गतिविधियों की गैर-व्यवहार्यता (नुकसानदेह होना), कोयले से होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति के बारे में निति का अभाव, भूमि अधिग्रहण में हेराफेरी और मानव और संवैधानिक अधिकारों का घोर उल्लंघनों के चलते यह ज़रूरी हो जाता है की इस तरह की परियोजनाओं का मूल्यांकन किया जाए, विशेष रूप से उन लोगों द्वारा जो इसका खामयाज़ा भुगत रहे हैं|

खनन विकासक व ऑपरेटर (एमडीओ) की भूमिका

एनटीपीसी को कोयला खनन का कोई पूर्व अनुभव नहीं था और इसलिए कोयला खदान के विकास और संचालन का ठेका थेइस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नाम की एक निजी कंपनी को सौंपा गया, जिसका बरकागांव और केरेदारी विकास खंड के लोगों द्वारा जमकर विरोध किया गया। इसके बाद, पकरी-बरवाडीह में वर्ष 2015-16 से 27 वर्षों के खनन कार्य के लिए त्रिवेणी सैनिक जॉइंट वेंचर को खनन विकासक व ऑपरेटर (एमडीओ) के रूप में नियुक्त किया गया। त्रिवेणी सैनिक माइनिंग प्राइवेट लिमिटेड, त्रिवेणी अर्थमूवर्स प्राइवेट लिमिटेड और सैनिक माइनिंग एंड अलाइड सर्विसेज लिमिटेड की संयुक्त भागीदारी वाली कंपनी है, और एमडीओ का ठेका इसे टेंडर प्रक्रिया में कोयला खदान के विकास के लिए सबसे कम कीमत की बोली लगाने के लिए दिया गया, जिसमें इसने अडानी इंटरप्राइजेज सहित दर्जनभर कंपनियों को हराया था। एनटीपीसी ने खनन विकासक व ऑपरेटर (एमडीओ) जैसी शब्दावली का इस्तेमाल किया है जिसकी कानून में कोई परिभाषा नहीं है। इसके ज़रिये, कानूनी दायरे के अंदर रहने का दावा करते हुए एनटीपीसी ने कानून के पालन, मुआवज़े की ज़िम्मेदारी और प्रभावित समुदायों के प्रति सीधी जवाबदेही से अपना पल्ला झाड़ लिया है। एमडीओ जैसी इकाई की भारतीय संविदा (कॉन्ट्रैक्ट्स) अधिनियम, 1872 में कोई कल्पना नहीं की गई है, और यह मिनरल कन्सेशन नियम, 1960 (नियम 37(1)) का भी उल्लंघन है, जिसके तहत कोयला खदानों का संचालन के लिए आगे निजी ठेकेदारों को दिया जाना प्रतिबंधित है। लाभ के लिए स्थापित निजी इकाई के रूप में त्रिवेणी सैनिक का कंपनी रजिस्ट्रार के नई दिल्ली कार्यालय में आधिकारिक पंजीकरण नवम्बर 27, 2015 को हुआ, जबकि पकरी-बरवाडीह खदानों के लिए इसकी बोली इस तारिख के पहले ही जमा की जा चुकी थी, जो इसके कानूनी दर्जे पर सवाल खड़े करता है। त्रिवेणी अर्थमूवर्स का भारत के खनन उद्योग में दागदार इतिहास रहा है, विशेष रूप से लौह- अयस्क खनन के क्षेत्र में जहाँ

इस कंपनी ने बड़े खदानों के पट्टेदारों से बलपूर्वक ठेके हासिल करने के लिए कई तरह के हथकंडों का इस्तेमाल किया है। न्यायमूर्ति एम बी शाह समिति की गैर-कानूनी खनन पर रिपोर्ट और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा गठित विशेषाधिकार समिति की रिपोर्ट, दोनों में ही त्रिवेणी के नाम का खासतौर पर उल्लेख किया गया है। फ़रवरी 2, 2018 को हज़ारीबाग के बरकागांव पुलिस थाने में जिला टास्क फॉर्स (डीटीएफ) के जांच अधिकारी द्वारा जॉइंट वेंचर त्रिवेणी सैनिक लिमिटेड के खिलाफ प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) दायर की गई जिसमें कहा गया कि यह कंपनी निर्माण कार्य में इस्तेमाल किये जाने वाले पत्थरों की चिप्स और बजरी के गैर-कानूनी खनन, ढुलाई और भंडारण में शामिल है, पर इसके बाद कंपनी के खिलाफ उठाये गए कदमों के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। गाँव के निवासियों के पास इस बात के सबूत हैं कि त्रिवेणी सैनिक ने मार्च और अगस्त 2018 के बीच धड़ल्ले से कई दावेदारों के साथ सीधे तौर पर अनाधिकारिक समझौता किये हैं, जिसमें उनकी खदान विस्थापित ग्राम विकास समिति द्वारा भी मदद की गई है। ऐसी भी रिपोर्ट आई हैं कि इसी तरह के अनाधिकारिक समझौते केंद्र खनन क्षेत्र से लगे हुए गांवों - चिरूडीह, नागरी और उरूब - के भू-मालिकों के साथ भी किये गए हैं। 2016 में, त्रिवेणी सैनिक के जनसंपर्क अधिकारी (पीआरओ) ने खनन-प्रभावित गांवों के युवाओं द्वारा स्वयंसेवी कल्याणकारी गतिविधियों की आड़ में अपनी असली गतिविधियों के लिए सोसाइटीज पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत 'खदान विस्थापित ग्राम विकास समिति' के नाम से एक नई समिति का पंजीकरण कराया। एनटीपीसी ने त्रिवेणी सैनिक को न केवल कोयला खनन और ढुलाई के काम का ठेका दे दिया है बल्कि खनन-प्रभावित क्षेत्र में कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) की गतिविधियों का ज़िम्मा भी त्रिवेणी सैनिक को दे दिया गया है। खदानों के संचालन के अलावा, त्रिवेणी सैनिक को प्रभावित परिवारों को खदानों के विस्तार के साथ खेप में अपनी ज़मीनें छोड़ कर पुनर्वास कॉलोनी जाने के लिए राज़ी करने की अतिरिक्त ज़िम्मेदारी भी दी गई हैं। इस समिति के सदस्य परदे के पीछे से गांव वालों और

कंपनी के बीच ज़मीन के किराये/बिक्री तथा ज़मीन पर मालिकाना हक़ से जुड़े आपसी विवादों को सुलझाने और आपसी मन मुटाव वाले परिवार के सदस्यों के बीच मुआवज़े के बटवारे से जुड़े मामलों में बिचौलिए का काम करते हैं। इसके लिए यह स्थानीय जाति समीकरणों, आर्थिक गैर-बराबरी, आपसी मनमुटाव, भूमि पर मालिकाना हक़ और भूमिहनता से पैदा होने वाले मतभेदों, रोज़गार की आकांक्षा आदि का दुरुपयोग करते हैं। कंपनी की इस बहुआयामी रणनीति की तर्ज पर ही, फूट डालो और राज करो के मंत्र को अपनाकर नौकरी का प्रलोभन, गांवों में अफवाह फैलाना, मज़दूरी पर निर्भर गांव के लोगों को अपने वश में करने जैसे हथकंडों का समिति के ज़रिये सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया गया है।

ज़मीन, जीवन और रोज़गार का नुकसान, शारीरिक हिंसा का डर, पुलिस द्वारा डराया-धमकाया जाना, मिलने वाले मुआवज़े के बारे में अनिश्चितता, अपर्याप्त सुविधाओं वाली पुनर्वास कॉलोनी जाने में हिचकिचाहट के कारण गांव वाले समिति के सदस्यों द्वारा शोषण के शिकार बन रहे हैं, जो लोगों पर दबाव डालकर उन्हें कंपनी का प्रस्ताव मानने के लिए मजबूर कर रहे हैं। एनटीपीसी प्रबंधन और त्रिवेणी सैनिक की साझा जवाबदेही के इस कुचक्र के चलते गांव के प्रभावित लोग असहाय हो गए हैं, क्योंकि उन्हें हर काम के लिए ऊँची कटीली तारों से घिरे कड़ी निगरानी और सुरक्षा से लैस त्रिवेणी सैनिक के दफ्तर जाने के भयभीत करने वाले अनुभव से गुज़रना पड़ता है। खदानों का ठेका त्रिवेणी सैनिक को दिए जाने के पीछे का असल मकसद, औद्योगिक हादसे जैसी किसी भी अनहोनी या प्रभावित लोगों के पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास की ज़िम्मेदारी निजी ठेकेदार पर डालने की मंशा है।

वित्तीय अनियमितता

हज़ारीबाग जिले में फैले करणपुरा कोयला खदानों में एनटीपीसी के बिनाह पर एमडीओ त्रिवेणी सैनिक द्वारा खनन किया जा रहा है। इस परियोजना के लगभग 4257.96 करोड़ के

ठेके को त्रिवेणी सैनिक ने अडानी को हराकर हासिल किया था। हालांकि समय के साथ ठेके की लागत में बदलाव आया है पर परियोजना की असल लागत इससे कहीं ज़्यादा आंकी जा रही है। लागत में यह फर्क ही इस परियोजना के घाटे का सौदा होने का कारण है। इसके अलावा सामाजिक, पर्यावरणीय और सांस्कृतिक-आर्थिक लागत जैसी कई अन्य लागतें हैं जिने शामिल किये जाने पर परियोजना की कुल लागत कहीं ज़्यादा हो जाती है। अगर इन लागतों को शामिल किया जाए तो परियोजना की कुल लागत, इससे होने वाले कुल आय से कहीं ज़्यादा हो जाएगी, जो इस परियोजना के औचित्य पर सवालिया निशान खड़ा करता है।

इस परियोजना का वित्तीय विश्लेषण करने के दो तरीके हैं। पहला, सार्वजनिक रूप से उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण और दूसरा, परियोजना में किये गए निवेश और उससे होने वाले फायदा की तुलना। इस परियोजना की तीन दशक की खनन की अवधी के दौरान 4247.96 करोड़ रुपये के अनुमानित खर्च में से अभी तक 1301.12 करोड़ रुपये खर्च किये जा चुके हैं। अगर प्रतिशत वार आंकड़े देखे जाएं तो सामाजिक-पर्यावरणीय खर्च न के बराबर किया गया है। पर्यावरण प्रबंधन पर 1.3672 करोड़ रुपये और क्षतिपूरक वनरोपण निधि अधिनियम, 2016 (कैम्पा) के तहत काटे गए पेड़ों की भरपाई के लिए 10.81 करोड़ रुपये खर्च किये गए हैं। इसके अलावा परियोजना की पूरी अवधी (30 साल) के दौरान पर्यावरण प्रबंधन के लिए 21 करोड़ रुपये आवंटित किये गए हैं, यानी 84 लाख रुपये प्रति वर्ष। इस 84 लाख रुपये की राशि में से 12 लाख प्रदूषण नियंत्रण, 5 लाख प्रदूषण की मॉनिटरिंग, 5 लाख व्यावसायिक सुरक्षा, 42 लाख हरित पट्टी के विकास के लिए, और 20 लाख सामाजिक-आर्थिक कल्याणकारी गतिविधियों के लिए आवंटित किये गए हैं। यह बहुत ही निराशाजनक है। अगर निवेश के दृष्टिकोण से देखा जाए तो मूल्यांकन परियोजना के लाभ-लागत अनुपात के आधार पर किया जाएगा। मुनाफे के लिए किये गए निवेश के संदर्भ में लाभ-लागत अनुपात को लाभदायकता का मापदंड माना जाता है। दूसरे शब्दों में,

लाभ-लागत अनुपात किसी भी प्रस्तावित परियोजना से होने वाले मुनाफे और उसकी लागत के बीच के तुलनात्मक रिश्ते को दर्शाता है। अगर यह अनुपात 1 से अधिक है, तो यह परियोजना निवेशकों के लिए मुनाफे वाली और अगर कम तो घाटे का सौदा होगा। पकरी-बरवाडीह में कोयला खनन की योजना के लिए यह अनुपात 100 और 85 प्रतिशत क्षमता के लिए क्रमशः 0.92 और 0.56 है, जिससे साफ़ हो जाता है कि पकरी-बरवाडीह में कोयला खनन में निवेश वित्तीय दृष्टिकोण से लाभदायक नहीं होगा। एनटीपीसी को होने वाले वार्षिक लाभ में बढ़ोत्तरी देखी गयी है जिसका एक महत्वपूर्ण कारण टैक्स क्रेडिट रहा है। 2017-18 से 2018-19 के बीच एनटीपीसी की ब्याज और कर चुकाने से पहले होने वाली आमदनी (ईबीआईटी) में भी बढ़ोत्तरी देखी गयी है। आंकड़ों में, एनटीपीसी की इक्विटी (शेयरों का बाजार में मूल्य) 54,000 करोड़ रूपए है जिसका अधिकाँश हिस्सा नियमित स्रोतों का है। इसका मतलब हुआ कि एनटीपीसी का लाभ और इक्विटी का अनुपात (लाभांश) पहले से तय की गयी सीमा में ही रहना चाहिए, जबकि 2018-19 में इसमें गिरावट देखी गई है। हालांकि एनटीपीसी का इक्विटी (शेयर) और कर्ज़े का अनुपात अभी अस्थिरता की सीमा तक नहीं पहुंचा है, लेकिन इस अनुपात में बढ़ोत्तरी का रुझान गिरते आमदनी-निवेश अनुपात से पैदा होने वाली दिक्कतों को और गहरा बना रहा है। वित्तीय नज़रिये से यहाँ आकर मामला और भी पेचीदा हो जाता है। एनटीपीसी का प्लांट लोड फैक्टर (संयंत्र की क्षमता का कितना प्रतिशत हिस्सा इस्तेमाल होता है) लगातार ऊंचे स्तर पर बना हुआ है, 75% से ऊपर। लेकिन, इसका प्लांट अवेलेबिलिटी फैक्टर (संयंत्र में कितने प्रतिशत समय बिजली उत्पादन होता है) में 90% तक की गिरावट आई है जिसका कारण कोयले की कमी रहा है, जिससे संकेत मिलता है कि एनटीपीसी अपनी कोयला-आधारित बिजली उत्पादन क्षमता को भविष्य के लिए बचा कर रख रहा है। अगर हम प्लांट लोड फैक्टर और प्लांट अवेलेबिलिटी फैक्टर को गुणा करें तो हमें मिलने वाली एनटीपीसी की प्रभावी क्षमता उपयोग दर (यानी क्षमता के मुकाबले प्रतिदिन होने वाले बिजली का उत्पादन) में गिरावट देखी जा सकती है।

इसे अगर वास्तविक बिजली दरों में हो रही गिरावट से जोड़ कर देखें तो एनटीपीसी के घटते आमदनी-निवेश अनुपात का कारण साफ़ हो जाता है। इस गिरते मुनाफे के पीछे कोयले की कमी है और इसी वजह से एनटीपीसी को कोयला खदाने आवंटित की गयी हैं, लेकिन विवादों से घिरी और कमज़ोर माली हालत वाली कंपनी को एमडीओ के रूप में नियुक्त किया जाना अपनी ही पैर पर कुल्हाड़ी मारना है।

ज़्यादा राख वाले निम्न-श्रेणी की गुणवत्ता वाले कोयले पर चलने वाले संयंत्रों में प्रदूषण फैलाने वाली गैसों के उत्सर्जन को घटाने वाली तकनीक लागू करने की लागत भी बहुत ज़्यादा है। एनटीपीसी अब कोयला जलाने की प्रक्रिया और बिजली उत्पादन के अन्य आयामों में बदलाव के ज़रिये प्रदूषण मानदंडों को घटाने की वकालत कर रहा है। इससे एनटीपीसी की लागत में कटौती ज़रूर होगी, लेकिन प्रदूषण के बढ़ने का खतरा भी पैदा होगा। इसके अलावा भारतीय रेल सेवा द्वारा कोयले की ढुलाई से जुड़ी कुछ चुनितियाँ भी हैं, जैसे ढुलाई में देरी या ढुलाई के लिए कोयले या रेल सेवा की उपलब्धता में अनिश्चितता, जिसका सीधा असर एनटीपीसी की माली हालत पर पड़ता है। इन बुनियादी सेवाओं से पैदा होने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए, एनटीपीसी को बाहर से आयात किये गए कोयला पर निर्भर होना पड़ेगा, और ऐसा करने पर कोयला खदानों के आवंटन का कोई औचित्य नहीं बचता। तो वित्तीय दृष्टिकोण से कोयले की खदानों के मामले में एनटीपीसी अब एक दुविधा की स्थिति में है।

ज़मीनों पर जबरन और गैर-कानूनी कब्ज़ा

झारखंड के हज़ारीबाग जिले (बिहार की सरहद से लगा हुआ) में स्थित पकरी-बरवाडीह, चट्टी बरियातू (चट्टी बरियातू-दक्षिण सहित) और केरेदारी, उत्तर करणपुरा कोयला खदानों की धूरी है। इस परियोजना के अंतर्गत एनटीपीसी द्वारा 32 गांवों का अधिग्रहण किया गया है। इसके तहत एनटीपीसी ने कुल 4977.58 हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण किया है, जिसमें वन क्षेत्र

(1140.77 हेक्टेयर), कृषि भूमि (3002.68 हेक्टेयर); चराई भूमि (454.71 हेक्टेयर), बंजर भूमि (184.31 हेक्टेयर), आवासीय भूमि (101.22 हेक्टेयर), सड़कें और मौसमी नाले (29.15 हेक्टेयर); गीली भूमि (जलाशय या जलमग्न भूमि: 32.7 हेक्टेयर), और अन्य प्रकार की ज़मीनें (32.33 हेक्टेयर) शामिल हैं। एमडीओ त्रिवेणी सैनिक ने एनटीपीसी के बिनाह पर भूमि अधिग्रहण करने के लिए बिचौलियों को नियुक्त किया है, जिसको कानूनी और पर्यावरणीय दिशानिर्देशों के उल्लंघनों के बावजूद राज्य और जिला प्रशासन द्वारा पूरा समर्थन दिया जा रहा है। भूमि का अधिग्रहण कोयला धारक क्षेत्र (अर्जन और विकास) अधिनियम, 1957 के तहत समुदाय के साथ सलाह-मशवरा या उनके जीवन पर होने वाले प्रभावों का मूल्यांकन किये बिना किया गया है और भूमि पर लोगों के अधिकार बलपूर्वक छीन कर पहले कोयला मंत्रालय को और फिर 2009 में एनटीपीसी को सौंप दिए गए हैं। एनटीपीसी द्वारा भूमि अधिग्रहण से प्रभावित होने वाले कुल परिवारों (8339 परिवार) में से 87.2 प्रतिशत परिवारों की सहमति नहीं ली गई है, क्योंकि 4071 एकड़ भूमि का अधिग्रहण कोयला धारक क्षेत्र (अर्जन और विकास) अधिनियम, 1957 के तहत किया गया है जबकि सिर्फ 769 एकड़ भूमि को ही भूमि अधिग्रहण कानून, 1894 के तहत अधिग्रहित किया गया है। मुआवज़े के पैकेज में भी सिर्फ कृषि भूमि और मकान की ज़मीनों के लिए ही भुगतान किया गया है जो ली गई कुल 3319.42 हेक्टेयर ज़मीन का बहुत छोटा सा हिस्सा है। इसके कारण 210 गांव नक़्शे से साफ़ हो जाएंगे। पहले चरण के अंतर्गत आने वाले सात गांव हैं चिरूडीह, इतिज, नगड़ी, अरहरा, पकरी-बरवाडीह, डडीकलान और चेपाकलान। इन गांवों की सभी ज़मीनों का अधिग्रण 7000 से अधिक निवासियों के रोज़गार को प्रभावित करेगा, जिनमें से अधिकाँश पूरी तरह से खेती पर निर्भर हैं और उनकी आय का और कोई जरिया नहीं है। गांव के निवासी अपनी ज़मीनें नहीं देना चाहते हैं क्योंकि उनका आरोप है कि सरकार द्वारा कानून और नियमों का उल्लंघन किया गया है। इन विकास खंडों की आबादी का 25% हिस्सा दलितों और आदिवासी समुदायों का है जिन्हें भूदान आंदोलन के समय ज़मींनें आवंटित की गई थी पर

उसके पुख्ता दस्तावेज़ नहीं दिए गए थे। राज्य सरकार के अधिकारियों के अनुसार सिर्फ भूदान पर्चे (भूदान लगान रसीद और कब्जे के अस्थायी प्रमाणपत्र) भूमि पर अधिकार के सबूत के लिए काफी नहीं है क्योंकि दान की गई भूमि का पाने वाले के नाम से कानूनी रूप से पंजीकरण नहीं किया गया है। यह परिवार इन भूदान ज़मीनों को सालों से जोत रहे हैं और साल की चार फसल भी ले रहे हैं। इन दस्तावेज़ों के न होने को कारण बताकर कई भुइयां परिवारों को एनटीपीसी द्वारा दिए जा रहे नकद मुआवज़े से वंचित रखा गया है। 2009 से करीब 150 परिवारों की ज़मीनों को जबरन हथिया लिया गया है। यह क्षेत्र अपनी उपजाऊ मिट्टी के लिए जाना जाता है, जिसमें आम तौर पर साल में कम से कम तीन फसलें उगाई जाती हैं। जंगलों पर निर्भर समुदायों, जंगलों के बीच रहने वाले समुदायों और भूमिहीन किसानों को सबसे ज़्यादा मुश्किलों का सामना करना पड़ा है। गैर-मजूरवा/मजरुआ आम, गांव के जंगल (जंगल से सटे गाँवों से जुड़ा जंगल का टुकड़ा), तथाकथित बंजर भूमि और चरागाह साझा संसाधन हैं जो किसी एक व्यक्ति की संपत्ति नहीं हैं और जिनपर गांव के निवासियों के सामूहिक रूप से अधिकार हैं। लेकिन खनन करने के लिए अधिग्रहित गांव की साझा स्वामित्व वाली भूमि और संसाधनों के लिए मौजूदा पैकेज में कोई प्रावधान नहीं किया गया है। समुदाय द्वारा जोती जा रही साझा भूमि, जो उनके गुज़र-बसर के लिए बहुत ज़रूरी है, उसे खनन के लिए इस्तेमाल करने का फैसला लेने से पहले ग्राम सभाओं की सहमति भी नहीं ली गयी है।

प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, हज़ारीबाग द्वारा गठित एक न्यायायिक जांच के दौरन खनन क्षेत्र की ज़मीनों से जुड़े दस्तावेज़ों में कई गड़बड़ियां पाई गयी हैं। इस जांच में पाया गया कि कई लोगों के नाम पर गैर-मजूरवा/मजरुआ ज़मीनों पर उनके अधिकारों की पुष्टि करने वाले नकली प्रमाणपत्र धड़ल्ले से बिना किसी ज़मीनी सर्वेक्षण के जारी किये गए थे। गांव के निवासियों के अनुसार पकरी-बरवाडीह कोयला खनन परियोजना के अंतर्गत आने वाले पूरे

खनन क्षेत्र में नकली दस्तावेज़ जारी किए जाने, फ़र्ज़ी भूमालिकों को मुआवज़ा दिया जाना, मुआवज़े से असली हकदारों को वंचित करना जैसी कई गड़बड़ियों के उदाहरण देखे जा सकते हैं।

भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास अधिनियम 2013 और वन अधिकार अधिनियम 2006 का उल्लंघन

भूमि अधिग्रहण लगातार विवाद का मुद्दा रहा है जो खनन कार्य में देरी का कारण भी रहा है। एनटीपीसी ने भूमि अधिग्रहण कानून 1894 और अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (वन अधिकार अधिनियम 2006) के प्रावधानों का पालन नहीं किया है जिसके कारण कई परिवारों को पर्याप्त मुआवज़ा नहीं मिल पाया है। खनन कार्य के शुरू होने के बाद से, एनटीपीसी ने सक्रिय रूप से कानूनी और पर्यावरणीय दिशानिर्देशों का उल्लंघन किया है, जिनका पूरे झारखंड राज्य में किसानों, गैर-सरकारी संगठनों और सामाजिक आंदोलनों द्वारा लगातार विरोध किया गया है। इन मुद्दों के समाधान की ओर कदम उठाने के बजाय एनटीपीसी ने प्रशासन के साथ मिलकर इन प्रतिरोध की आवाज़ों को दबाने का प्रयास किया है। कंपनी और कानून व्यवस्था, स्थानीय प्रशासन और पर्यावरण मंत्रालय के बीच मिलीभगत समुदाय के साथ किये गए व्यवहार से स्पष्ट हो जाती है।

किसानों ने अपनी चिंताओं को परियोजना के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन की प्रक्रिया के तहत की गई जन सुनवाइयों में कई बार उठाया है पर उनका कोई संज्ञान नहीं लिया गया है। इन सबके बावजूद, पर्यावरण मंत्रालय ने परियोजना को मंज़ूरी देकर एनटीपीसी द्वारा खाना को हरी झंडी दिखा दी है। किसानों के विरोध और अन्य कारणों के चलते, पकरी-बरवाडीह,

चट्टी-बरियातू और केरेदारी में एनटीपीसी को आवंटित की गई कोयला खदानों में तय समय सीमा के अंदर खनन कार्य शुरू नहीं किया जा सका है।

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन अधिनियम, 2013 के तहत भूमि अधिग्रहण के प्रस्तावों पर निर्णय लेने से पहले संबंधित ग्राम सभाओं और पंचायत संस्थानों से पूर्व और पूरी सूचना उपलब्ध कराने के बाद सहमति लेना अनिवार्य है। भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन अधिनियम, 2013 में प्रावधान है कि अधिग्रहण की मांग करने वाली कंपनी द्वारा परियोजना के सामाजिक प्रभाव की प्रारंभिक जांच की जाए, एक सामाजिक प्रभाव आकलन रिपोर्ट तैयार की जाए और इस रिपोर्ट पर एक आधिकारिक जनसुनवाई के ज़रिये ग्राम सभाओं की सहमति ली जाए। लेकिन चूंकि 2009 में अधिग्रहित की गई भूमि का एक बड़ा हिस्सा कोयला अधिनियम, 1957 के तहत लिया गया था, एनटीपीसी को अनिवार्य रूप से सामाजिक प्रभाव आकलन सर्वेक्षण करने या प्रभावित समुदायों की सहमति लेने या भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन अधिनियम, 2013 के अनुसार मुआवज़ा देने के लिए नहीं कहा गया। मौजूदा संवैधानिक प्रावधानों की अवहेलना करते हुए, एनटीपीसी ने वन विभाग से भी करीब 2000 एकड़ जमीन अर्जित की है। यह अधिग्रहण गैर-कानूनी है क्योंकि वन अधिकार अधिनियम, 2006 के तहत वन भूमि के अधिग्रहण से पहले उन ज़मीनों पर लोगों और समुदायों के अधिकारों को निर्धारित करना और 70 प्रतिशत ग्राम सभाओं की सहमति लेना अनिवार्य है। मौजूदा दस्तावेज़ों से यह प्रमाणित होता है कि संबंधित ग्राम सभाओं से सहमति लेने के बजाय कंपनी ने 2007 में 17 गांवों की वन अधिकार समितयों (ग्राम संयुक्त वन प्रबंधन समिति) से सहमति पत्र हासिल किये थे, जिनके आधार पर पर्यावरण मन्त्रालय द्वारा मंजूरी दी गई है। इनमें से किसी भी सहमति पत्र में इन जंगलों में बसने वाले वन्यजीवों का कोई उल्लेख नहीं किया गया है। पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन की प्रक्रिया में एनटीपीसी द्वारा जानबूझकर इन जंगलों के निवासियों को नज़रअंदाज़ किया गया

है, जबकि वन अधिकार अधिनियम 2006 के प्रावधानों के तहत इन ज़मीनों पर उनके भी अधिकार हैं।

प्रकृति और रोज़गार पर प्रभाव

इस क्षेत्र के 32 गांवों को कई जल धाराओं, नालों और छोटी नदियों से पानी मिलता है, जो बाद में सहायक नदियों का रूप लेकर दामोदर नदी से जाकर मिल जाती हैं, जिस पर भी अब खनन का प्रभाव पड़ने वाला है। पहले ही इस परियोजना से एक मानव-निर्मित झील और जल के दो प्राकृतिक स्रोत - शंख नाला और सोनबरसा नदी - बर्बाद हो चुके हैं। कुल 1140.47 हेक्टेयर वन भूमि वाले इस क्षेत्र के भूगर्भ और पर्यावरण पर जलवायु परिवर्तन और धरती के गर्म होने के प्रभाव खनन के चलते और भी गंभीर हो सकते हैं और इस इलाके के लोगों के जीवन को प्रभावित कर सकते हैं। 3002.68 हेक्टेयर कृषि भूमि पर भी खनन की वजह से विपरीत असर पड़ेगा जिससे खेती पर भी बुरा प्रभाव होगा जो लोगों की आय का मुख्य ज़रिया है। सरकारी नक्शों के हिसाब से जंगल से लगे हुए गांवों की आधिकारिक सीमा बरकागांव आरक्षित वन (रिज़र्व फारेस्ट) क्षेत्र से सटी है, और यह गांव गुज़र-बसर के लिए इन जंगलों पर निर्भर हैं। जो गांव सरकारी नक्शों के अनुसार जंगलों की सीमा में आते हैं उन्हें भी अपनी वास्तविक ज़रूरतों के लिए जंगल से मिलाने वाली चीज़ों (वन उत्पाद) के इस्तेमाल का अधिकार है। चुरचू और आस पड़ोस के गांवों की महिलाएं तिलैया टाँड जंगल से जलाऊ लकड़ी और अन्य वन उत्पाद इकठ्ठा करती थी। जंगल के ख़त्म हो जाने से चुरचू की महिलाओं के पास अपना चूल्हा जलाने के लिए विशालकाय ओ.बी. ढेर की खतरनाक ढलान पर कोयले के टुकड़े चुनने के अलावा कोई और चारा नहीं बचा है।

सामूहिक चरागाह जिसपर आस पड़ोस के चार गांव निर्भर थे, वह ज़मीन भी कोयला खदान की भेंट चढ़ गई है। इस चरागाह के ख़त्म हो जाने के कारण भुइयां समुदाय (जो परंपरागत

रूप से सुअरों और भैसों को पालते हैं) को अपने आधे पशुओं को साप्ताहिक हाट में बेचने पर मजबूर होना पड़ा है क्योंकि वे इनके लिए चारा खरीद पाने की स्थिति में नहीं है। पशुपालन और चराई पर खनन का बहुत बुरा असर हुआ है, और इसकी वजह से इलाके की जैव-विविधता का संतुलन पूरी तरह से बिगड़ चुका है। भूमि का अधिग्रहण सिर्फ खनन के लिए ही नहीं बल्कि इससे संबंधित बुनियादी सेवाओं के लिए भी किया गया है।

प्रभावित गांवों के निवासी इन खनन गतिविधियों का शुरुआत से ही विरोध करते आ रहे हैं, और इस क्षेत्र को कृषि-समृद्ध और उपजाऊ इलाके के रूप में मान्यता दिए जाने की मांग कर रहे हैं। उनका दावा है कि यह ज़मीनें न सिर्फ उनकी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती हैं बल्कि यह हमेशा उनके रोज़गार का ज़रिया रही हैं। इन ज़मीनों के उपजाऊ होने का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इनमें साल में तीन फसलें लगायी जाती हैं: खरीफ़, रबी और भदई। इस क्षेत्र से राज्य और देश के कोने कोने में सब्ज़ियां और गुड़ भेजा जाता है। राज्य की अधिकांश आबादी का पेशा खेती है जो लोगों को खाद्य सुरक्षा और रोज़गार दोनों देती है। अगर पेशे से जुड़े आंकड़े देखें तो 41.29% किसानी, 32.14% खेत मज़दूरी, 2.89% घरेलु काम और 23.68% लोग अन्य पेशों से जुड़े हैं। इसी तरह केरेदारी में, 33.84% किसानी, 53.97% खेत मज़दूरी, 1% घरेलु काम और 11.19% लोग अन्य पेशों से जुड़े हैं। राज्य में किसानी और खेत मज़दूरी से जुड़ी आबादी का कुल अनुपात 73.43% है, जबकि बरकागांव और केरेदारी में खेती पर निर्भर आबादी का यह आंकड़ा क्रमशः 73.43% और 87.81% है। यह वाकई में एक बड़ी विडंबना है कि सरकार विकास के यूरोपीय मॉडल की तरफ आकर्षित होकर, संसाधनों के मामले में इतने समृद्ध इलाके में इस तरह के औद्योगिक विकास को बढ़ावा दे रही है। कॉर्पोरेट कृषि (जहाँ हर स्तर पर कॉर्पोरेट कंपनियों पर निर्भरता हो) को तेज़ी से बढ़ावा देने की धुन में सरकार उन पारंपरिक टिकाऊ कृषि पद्धतियों को नज़रअंदाज़ कर रही है जो समाज का हज़ारों सालों से भरण-पोषण करती हुई आई हैं। कुछ साल पहले तक

इस इलाके में बड़े पैमाने पर बहुफसल पद्धति देखी जा सकती थी, लेकिन ज़मीनों के खनन के लिए अधिग्रहण के कारण इन पर अब खतरे का साया मंडरा रहा है। जिन लोगों के संसाधनों और रोज़गारों को छीना जा रहा है उन लोगों के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित किये बिना, कंपनी इस परियोजना को कैसे लागू कर सकती है, यह रिपोर्ट इसी सवाल को उठती है।

प्रदूषण और स्वास्थ्य पर प्रभाव

कोयला खदानों और ताप बिजली सयंत्रों के आस-पास के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य पर इनके होने वाले प्रभावों पर कई गैर-सरकारी संगठनों द्वारा अनेक अध्ययन किये गए हैं जो टीबी (क्षय रोग), दमा, दिल या त्वचा से जुड़ी बीमारियों जैसे स्वास्थ्य पर होने वाले बुरे असर की पुष्टि करते हैं। एनटीपीसी और एमडीओ इन खतरों की अनदेखी कर रहे हैं, और अब लगने लगा है कि जनता द्वारा चुनी गई सरकार के लिए भी जन स्वास्थ्य का कोई महत्व नहीं है।

उरुब गांव की घनी आबादी वाली दलित बस्ती (95 भुइयां परिवारों का टोला जिसमें करीब 500 बालिग़ पुरुष और महिलाएं निवास करते हैं) अब चारों और से घिर चुकी है: सामने एक खदान है, पीछे खनन से निकले कचरे का पहाड़नुमा ढेर, और बाकी दिशाओं में कोयले के ढेर और ट्रकों की कतारों वाली सड़कें घेरे हुए हैं। यह दलित बस्ती खनन क्षेत्र से बहुत ही खतरनाक दूरी पर स्थित है, 11 मीटर से भी कम। त्रिवेणी सैनिक द्वारा खदान के गड्ढे में पानी के पोखरों में इकट्ठा होने वाले पानी को पंपों की मदद से खींच कर पाईप के ज़रिये खावा नदी में छोड़ा जा रहा है। पूरे इतिज गांव के निवासियों और उनके पशुधन के लिए पीने के पानी का एकमात्र स्रोत खावा नदी ही बची है। इसी तरह, 300 फ़ीट की गहराई पर खुले खनन (ओपन कास्ट) की वजह से पैदा होने वाले ज़बरदस्त जलीय दबाव के कारण कई प्राकृतिक झरने, तालाब, सिंचाई कुएं और सरकारी हैंडपंप भी अब सूख गए हैं। कई गांवों में धान की खड़ी

फसल उनपर गिराने वाली बड़े-बड़े पत्थरों (1-5 टन के वज़न वाले) की वजह से बर्बाद हो गई है। खनन के दौरान निकलने वाले ज़हरीले कीचड़ और मैले के रिसाव ने धान के खेतों को गंदे तालाबों में बदल दिया है।

परियोजना ने कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को जन्म दिया है जिनमें त्वचा से जुड़ी बीमारियां, सांस की तकलीफ, फेफड़ों और पेट से जुड़ी बीमारियां शामिल हैं। जिस 80 एकड़ भूमि पर एनटीपीसी द्वारा विशालकाय ओ.बी ढेर बनाया गया है, वहां कुछ समय पहले उरुब के भूमिहारों के धान के खेत (रैयती ज़मीन) हुआ करते थे। ओबी ढेर के आस पास की प्रदूषित हवा और लगातार उड़ती धुल के कारण 'सुस्ती और भूख न लगने की बिमारी' के महामारी के स्तर पर फ़ैलने की रिपोर्ट भी सामने आई है। धूल, प्रदूषण और विशालकाय ढुलाई वाहनों की कर्कश आवाज़ के लगातार संपर्क में आने से गांव में समय से पहले होने वाली मौतों तथा गर्भवती महिलाओं में गर्भपात, और 6 महीने से 3 साल की उम्र के बच्चों में कुपोषण के स्तर में अचानक बढ़ोत्तरी देखी गई है।

कोयले को जलाने के बाद बचने वाली राख बहुत ज़हरीली होती है, जो आस पास के खेतों और पानी के स्रोतों को प्रदूषित कर सकती है। कोयले के जलने के दौरान हवा में छोड़े जाने वाले धुंए का वायु-मंडल की ओजोन परत पर बुरा प्रभाव होता है, जिसे पृथ्वी के तापमान में देखी जा रही गर्मी का मुख्य कारण माना जाता है। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा तय किये गए मानदंडों के अनुसार 2003 और 2016 के बीच मंज़ूर किये गए बिजली संयत्रों द्वारा छोड़ी गई नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसों की मात्रा को 300 मिलीग्राम प्रति घन मीटर तक सीमित किया जाना चाहिए और 2016 के बाद स्थापित किये गए नए बिजली के संयत्रों द्वारा छोड़ी गई नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसों की मात्रा को 100 मिलीग्राम प्रति घन मीटर तक सीमित किया जाना चाहिए। कोयले से लदी गाड़ियों का कान छेदने वाले शोर, वक़्त बेवक़्त होने वाले धमाकों का खौफ, घरों पर छा जाने वाले धुल के गुब्बार, प्रदूषित हवा,

ज़हरीले ओबी ढेर से पैदा होने वाले खतरे, पीने के पानी की रोज़ की किल्लत की धीमी पर व्यापक हिंसा, और शारीरिक उत्पीड़न अब भुइयां समुदाय की बर्दाश्त के बहार हो गया है।

पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन नीति की सच्चाई

एक सार्वजनिक क्षेत्र की इकाई होने के नाते एनटीपीसी की जिम्मेदारी और जवाबदेही निजी कंपनियों से कहीं ज़्यादा है, जिसका उल्लेख औद्योगिक नीति संकल्प, 1948 में भी किया गया है। इस संकल्प के तहत सरकारी क्षेत्र की इकाइयों को देश की अर्थव्यवस्था, उद्योग और संसाधनों के समतापरक वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका दी गई है। सरकारी इकाई होने के नाते एनटीपीसी को न सिर्फ मानवाधिकारों का सम्मान करना चाहिए बल्कि उन्हें बढ़ावा देना चाहिए। इसके विपरीत, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन पैकेज के तहत इन विकास खण्डों में रहने वाले भूमिहीन खेत मज़दूरों की पूर्ण रूप से अनदेखी की गई है।

पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन के लिए सात गांवों को शामिल किया गया है: चिरूडीह, इतिज, नागरी, अरहारा, डाडीकलान, पकरी-बरवाडीह और चेपाकलान। प्रभावित परिवारों की कुल संख्या 2096 है जबकि सिर्फ 1068 परिवारों को ही ढेंगा और लकुरा में स्थित पुनर्वास कॉलोनियों में जगह दी गई है। इस रिपोर्ट में इन पुनर्वास कॉलोनियों के मकानों की दयनीय स्थिति का विवरण दिया गया है, जिसके आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि प्रभावित परिवारों और उनके मवेशियों का इन कॉलोनियों में रहना संभव नहीं है। इसके अलावा सिंदवारी, सोनबरसा, चर्चू, जुगरा, चेपाखुर्द, केरी, लंगटू, देवरियाखुर्द, उरूब और बड़कागांव के परिवारों के पुनर्वास के लिए इन कॉलोनियों में कोई व्यवस्था नहीं की गई है। पकरी-बरवाडीह कोयला खनन योजना को अगर पूरी तरह से लागू किया जाता है तो 2221 परियोजना प्रभावित लोगों (अनाधिकारिक आंकड़ा 16,000 है) को विस्थापित करके, जबरन एनटीपीसी द्वारा बनाई गई इन पुनर्वास कॉलोनियों में भेजा जाएगा। कंपनी की पुनर्वास और

पुनर्व्यवस्थापन नीति को एक 'पैकेज' का रूप दे कर बिना किसी बातचीत या मोलभाव के परियोजना प्रभावित परिवारों पर जबरन थोपा गया था। शुरुआत में जिस आर्थिक मुआवज़े की घोषणा की गई थी वह बहुत ही कम था: साल में चार फसलें देने वाली एक एकड़ (0.404 हेक्टेयर) कृषि ज़मीन के अधिग्रहण के लिए 10 लाख रुपये। मुआवज़े की ख़ामियों से भरी इस रूपरेखा के तहत सिर्फ खेती और मकान की ज़मीनों के लिए ही हर्जाना दिया गया है जबकि गांव की साझा ज़मीनों का प्रभावित परिवारों और समुदायों को कोई भी भुगतान नहीं किया जा रहा है। मुख्य रूप से दलित (जिनमें ज़्यादातर भुइयां) अपने पुश्तैनी घरों और खेतों को मुआवज़ा लेकर छोड़ कर जाने से साफ़ इनकार कर रहे हैं। उनका तर्क है कि 'बाज़ार मूल्य' के संदेहपूर्ण तरीके से लगाए गए हिसाब के आधार पर नकद मुआवज़े की जो रकम तय की गई है, वह उनके नुकसान की भरपाई करने के लिए काफी नहीं है। सरकारी दस्तावेज़ों में जिस 159.64 हेक्टेयर भूमि को 'बंज़र और अनुपजाऊ' दिखाया गया है वह असल में उपजाऊ ज़मीनें हैं जिनपर अभी तक मालिकाना हक़ निर्धारित नहीं किये गए हैं, और जिसे मुआवज़ा के बिना खनन के लिए दे दिया गया है।

एनटीपीसी द्वारा रैयती ज़मीनों के लिए मुआवज़े के भुगतान में अत्यधिक देरी की जा रही है और अन्य प्रकार की राजस्व प्रणाली के तहत आने वाली ज़मीनों (जैसे गैर-मजूरवा, बकश्त, हक़ूकानामा और भूदान) पर अधिकार वाले लोगों के दावों के बारे कंपनी ने चुप्पी साध रखी है। इस रिपोर्ट के लिए जिन लोगों से हमने बात की, उनका कहना था कि इस देरी के पीछे त्रिवेणी सैनिक को समय देने की साजिश है ताकि वह अनाधिकारिक हथकंडों के ज़रिये गांव वालों को मजबूर करके कम दामों में भूमालिकों से सीधे ज़मीन खरीद सके। यहां यह भी उल्लेख करना ज़रूरी है कि त्रिवेणी सैनिक द्वारा सभी अनाधिकारिक भुगतान मार्च और अगस्त 2018 के बीच किये गए थे। ये अनाधिकारिक समझौते त्रिवेणी सैनिक द्वारा बहुत ही जल्दबाज़ी में किये गए थे, जिसके लिए उन्हें समिति सदस्यों से पूरी मदद और समर्थन मिला।

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन अधिनियम 2013 के दो मुख्य भागों - प्रभावित परिवारों की सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए हर विस्थापित परिवार के एक योग्य सदस्य को रोज़गार देना और सामजिक सुरक्षा से जुड़े प्रावधानों - के पालन से एनटीपीसी का साफ़ इनकार करना प्रभावित आबादी में रोष का बड़ा कारण बन गया है। अपने पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन संकल्प पत्र में कंपनी ने संयुक्त पैकेज के रूप में प्रति एकड़ 15 लाख रूपए का आर्थिक मुआवज़ा देने का प्रस्ताव रखा है जिसमें दी गयी ज़मीन के

लिए मुआवज़ा (ज़मीन की कीमत, सोलेशियम[1] और कानूनन ब्याज सहित), पुनर्वास के दौरान रोज़गार के बंद होने के कारण 300 दिनों के लिए न्युन्यतम सुनिश्चित मज़दूरी के हिसाब से नकद राशि, खोये हुए रोज़गार के एवज़ में 600 दिनों के गुज़र-बसर के लिए ज़रूरी नकद राशि (रोज़गार वार्षिकी) और 'ज़मीन के बदले ज़मीन' के एवज में विस्थापितों से ली गई भूमि के मूल्य का 1/10 नगद हिस्सा शामिल हैं। बाद में मुजवाज़े को बढाकर 20 लाख रुपये प्रति एकड़ कर दिया गया। एनटीपीसी सभी विस्थापित परिवारों के पुनर्वास की प्रक्रिया एक ही बार में ख़त्म करना चाहती थी ताकि भविष्य में परियोजना प्रभावित परिवारों की ज़िम्मेदारी से पल्ला झाड़ा जा सके। जिले में आवासीय भूमि के मौजूदा बाजार मूल्य (करीब 15 लाख रुपए प्रति दशमलव भूमि) और प्रस्तावित मुआवज़े (20 लाख रूपए प्रति एकड़ या 100 दशमलव ज़मीन) के बीच का बड़ा फर्क, एक बड़ा कारण है जिसके चलते प्रभावित परिवार अपने गांव छोड़कर नहीं जाना चाहते हैं।

[1] सोलेशियम अनिवार्य रूप से अधिगृहित भूमि के लिए दिए गए मुआवज़े का हिस्सा है, जो उस भूमि की बाज़ार में कहीं ज़्यादा कीमत के एवज में दिया जाता है। नए भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अनुसार, भू-मालिकों को दिए जाने वाले न्युन्यतम मुआवज़े में सोलेशियम भी शामिल है, जिसकी रकम अधिगृहित भूमि के 100% बाजार मूल्य को, भूमि के ग्रामीण या शहरी इलाके में होने के आधार पर तय की गई संख्या से गुणा करके निर्धारित की जाती है। यह भूमि के मूल्य के अलावा दी गई रकम होती है।

पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन प्रक्रिया से वन निवासियों, बड़ी संख्या में भुईयां (दलित) और मुसहर (दलित माने जाने वाले आदिवासी) परिवारों को भी बाहर रखा गया क्योंकि एनटीपीसी द्वारा अधिगृहित कृषि भूमि पर मालिकाना हक़ के अपने दावों को साबित करने के लिए उनके पास लगान भुगतान रसीद या भूमि पंजीकरण प्रमाणपत्र नहीं हैं। एनटीपीसी की जिस सर्वेक्षण रिपोर्ट के आधार पर पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन योजना तय की गयी थी, उसके अनुसार पूरे परियोजना प्रभावित इलाके में 'कमज़ोर वर्ग के लोगों' की संख्या 'शुन्य' थी, जिसकी वजह से एनटीपीसी ने कई परियोजना प्रभावित परिवारों की ज़िम्मेदारी लेने से इनकार कर दिया। इन दस्तावेज़ों के अभाव को कारण बताकर कई भुइयां परिवारों को एनटीपीसी द्वारा तय किये गए मुआवज़े से वंचित रखा गया। क्योंकि ज़्यादातर भूदान ज़मीनें भूमिहीन और दलित परिवारों के पास थी, दस्तावेज़ों के अभाव के चलते इस खनन से होने वाले विस्थापन का सबसे बड़ा ख़ामयाज़ा इन्हें ही भुगतना पड़ा। दूसरी तरफ, ब्राह्मण और भूमिहार परिवार, जिनकी संख्या तो कम थी पर उनके पास पक्का-परचा (कानूनी रूप से ज़मीन के पंजीकरण के दस्तावेज़) होने के कारण, उन्हें मुआवज़े का पूरा लाभ मिला।

एनटीपीसी की पुनर्वास कॉलोनी, जहाँ अभी भी निर्माण कार्य चल रहा है, वह भी हिंसक संघर्ष का केंद्र रही है। सुरक्षा गार्ड लगातार कॉलोनी के प्रवेश द्वार पर गश्त लगाते रहते हैं। यहां शौचालय या स्नानघर की कोई व्यवस्था नहीं है। सोने के कमरे शहरों के सार्वजनिक शौचालयों से भी छोटे हैं। इन कमरों में एक छोटा एकल परिवार भी आराम से नहीं रह पाएगा। सार्वजनिक शौचालयों (छप्पर की छत वाले दो शौचालय और दो स्नानघर) को दो मकानों के बीच की बची जगह में गलत तरीके से बनाया गया है, जिसका इस्तेमाल जानवर बांधने के बाड़े के रूप में भी किया जाता है। अपने गांवों में लंबी-चौड़ी खुली जगहों में रहने के आदि इन ग्रामीण परिवारों के लिए कॉलोनी के इन सिकुड़े से मकानों में अपना घर बसा पाना लगभग असंभव है। 2016 में बनाई गई यह पुनर्वास कॉलोनी खाली पड़ी है क्योंकि

परियोजना के पहले चरण में सात गांवों से आधिकारिक तौर पर विस्थापित होने वाले 1068 परिवारों में से किसी को भी यहां रहना मंज़ूर नहीं था। इन मकानों में बुनियादी सुविधाओं का भी अभाव है जैसे बिजली और पीने के पानी की घरों में पाइपों के ज़रिये आपूर्ति। एनटीपीसी के पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन पैकेज के तहत लोगों से अपने पुश्तैनी गांव, लंबे-चौड़े और खुले घरों, साल में कई बार फसल देने वाले खेत-खलिहानों, हरे-भरे जंगलों और खूबसूरत नज़ारों को खोने के बदले, भविष्य की इस ज़िन्दगी का वायदा किया जा रहा है।

संस्कृति और धरोहर पर प्रभाव

हज़ारीबाग जिले में कई पुरातत्व-संबंधी ऐतिहासिक स्थल हैं जो संथाल आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक विरासत हैं। इस इलाके में कई बड़ी शिलाओं के ढांचे और चट्टानों पर कलाकृतियां जैसे ख़ास पुरातत्व-संबंधी स्थल हैं जो पूर्व-ऐतिहासिक काल में इस क्षेत्र में प्राचीन सभ्यता की मौजूदगी की गवाही देते हैं। इन ऐतिहासिक ढांचों और कलाकृतियों के अलावा, समुदायों के शमशान, कब्रिस्तान और मंदिर भी अब खनन की वजह से खतरे में हैं। महुआ और बढ़ के पेड़ों के जंगलों को पावन भूमि माना जाता है और लोग इनसे गुज़रते वक़्त नंगे पैर चलते हैं। खनन के विस्तार के कारण बर्बादी के खतरे का सामना करने वाले इस पवित्र उपवन को *गवंथ-देवता* के नाम से लोकप्रिय पूज्य देवता का निवास स्थान माना जाता है। *गवंथ-देवता* की ही तरह गांव के अन्य पूज्य देवी-देवताओं को भी अपने मौजूदा निवास स्थान से दूसरी जगह स्थानांतरित करने की योजना है, जिनमें *देवी मंडप* (देवी दुर्गा के मंदिर का प्रांगण जहां विवाह के रस्मों-रिवाज़ पूरे किये जाते हैं) और *पुरबइया गोसाईं* (पूर्व दिशा के प्रहरी देवता जिनकी धान की पौध लगाने से पहले पूजा की जाती है) शामिल हैं। *बजर-मरा,* के नाम से प्रचलित जगह, जिसका शाब्दिक अर्थ 'दुर्भाग्य से वक़्त के पहले मर जाने वाले बच्चों का कब्रिस्तान' है, उसे 'भुइयां बच्चों की रूहों के आराम करने की जगह' माना जाता था, और *बेला-तिरिल* के नाम से भी पुकारा जाता था, अब खनन की वजह से यह भी खतरे में है।

इसी तरह जंगलों में स्थित ऐसे कई श्रद्धास्थल और प्राकृतिक स्थल (झरने और पावन माने जाने वाले पेड़ों की प्रजातियां) हैं जो भुइयां समुदाय के आध्यात्मिक और धार्मिक जीवन का अटूट अंग थे, जिनका अब कोयला खदानों और उनसे जुड़े अन्य निर्माण कार्यों की वजह से वजूद ख़त्म हो चुके हैं।

सैन्य कार्यवाही: हत्याएं और भय का माहौल

पकरी-बरवाडीह के लोग करणपुरा बचाओ संघर्ष समिति और साथी संगठनों के झंडे तले एनटीपीसी और त्रिवेणी सैनिक की नीतियों का लगातार विरोध करते आ रहे हैं और उन्होंने अपने क्षेत्र के निर्वाचित प्रतिनिधियों से भी इस संघर्ष को समर्थन देने की अपील की है। स्थानीय कार्यकर्ताओं का कहना है कि कंपनी बार-बार लोगों को पुलिस कार्यवाही और जेल भेजने की धमकी देकर ज़मीनें खाली कराने की कोशिश कर रही है। परिवारों पर 20 लाख रुपये प्रति एकड़ के मुआवज़े को स्वीकार करने का दबाव डालने के उद्देश्य से अधिकारी लोगों को धमकी दे रहे हैं कि अगर उन्होंने मुआवज़ा स्वीकार नहीं किया तो इस रकम को राज्य के खजाने में जमा करा दिया जाएगा। गांव के निवासी परियोजना के लिए अपनी ज़मीनें न देने का दृढ़ निश्चय कर चुके हैं क्योंकि उनका आरोप है कि सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण की कानूनी प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है।

एनटीपीसी और त्रिवेणी सैनिक दोनों ने ही अपनी नीतियों के खिलाफ हो रहे विरोध को दबाने के लिए कई हथकंडों का इस्तेमाल किया है: गांव के निवासियों पर कड़ी निगरानी रखना, गांव के निवासियों की गतिविधियों और आवाजाही पर नज़र रखने के लिए उनके बीच बिचौलियों और दलालों द्वारा घुसपैठ कराना जो कंपनी को आयोजित किये जा रहे शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन या धरने या भूख हड़ताल की पहले से ही खबर दे देते हैं। कंपनी की संपत्ति का 'अतिक्रमण' करने वालों पर कड़ी नज़र रखने के लिए ऊँचे टावरों पर सैंकड़ों सीसीटीवी कैमरा

और बड़ी-बड़ी रोशनी की बत्तियां (डीजी लाइट) लगाई गई हैं। लोगों ने यह भी बताया कि खनन क्षेत्र के आस-पास के गांवों और इलाकों में अक्सर हवाई ड्रोन भी मंडराते रहते हैं।

पुलिस और सुरक्षाबलों ने कई बार लोगों पर हमला किया है और अभी तक उन पर तीन बार गोलीबारी की जा चुकी है: जून 2013, अगस्त 2015 और अक्टूबर 2016 में, जिसकी वजह से लोगों को जानलेवा चोटें आई हैं और कई मौतें हुई हैं। शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन करने वाले लोगों पर गोली चलाया जाना, जिसमें चार ऐसे युवाओं की जान चली गई, जो धरने में भाग भी नहीं ले रहे थे; गांव वालों पर हमला किया जाना और आंदोलन को समर्थन दे रही मौजूदा विधायक निर्मला देवी को गिरफ्तार किया जाना; कड़ी पुलिस कार्यवाई; प्रेस गोष्ठियों के माध्यम से (पुलिसकर्मियों और सरकारी अधिकारीयों पर हमले के बारे में) झूठ फैलाया जाना; इन सब का उद्देश्य शत्रुता और आतंक का माहौल पैदा करना, पुलिस द्वारा गोलीबारी को जायज़ ठहराना और असहाय गांव वालों पर पुलिस द्वारा किये गए अत्याचार और ज़्यादतियों से ध्यान बटाना है। प्रतिबंधित संगठन तृतीय प्रस्तुति समिति (टीपीसी) की ओर से धरना उठाने की धमकी दिए जाने के बारे शिकायत करने के बावजूद, उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई है, जबकि न्यायपूर्ण पुनर्वास और टिकाऊ रोज़गार की शांतिपूर्ण मांग कर रहे लोगों को निशाना बनाया जा रहा है।

चिरूडीह में पुलिस गोलीबारी के बाद, हथियारबंद पुलिस दस्ता (300-500 पुलिसकर्मी) धरने की अगुवाई करने के लिए क्षेत्र के विधायक को गिरफ्तार करने के बहाने हिंसा पर उतर आया, और एक के बाद एक, कई गांवों में लोगों की संपत्ति को नष्ट करना और जो भी हाथ आया उसे अंधाधुंध पीटना शुरू कर दिया, जिसमें बुज़ुर्गों, आठ-महीने की गर्भवती महिला, नाबालिग बच्चों, जवान दूल्हा और यहाँ तक की मवेशियों को भी नहीं बख्शा गया। स्थानीय राज्य प्रशासन ने आपातकालीन प्रावधानों का इस्तेमाल करते हुए दर्जन भर ज्ञात और सैंकड़ों अज्ञात लोगों के खिलाफ सरकारी कार्य को अवरुद्ध करने के लिए प्राथमिकी दर्ज की और उन

पर मामला-मुक़दमा शुरू कर दिया। अदालतों में इन मुकदमों को लड़ने, जेल जाने, वकील की महँगी फीस देने और ज़मानत के लिए अदालत से गुहार लगाने के भयावह अनुभव ने गांव वालों (ज़्यादातर किसानों) के सहस को तोड़ दिया। जो लोग विरोध प्रदर्शनों का हिस्सा नहीं थे उन्हें भी मारने के पीछे उद्देश्य यह स्पष्ट संदेश भेजना था कि प्रशासन एनटीपीसी की कोयला खदानों के खिलाफ हो रहे विरोध को दबाने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार है। गांवों पर छाए भय और आतंक के साए में, हथियारबंद पुलिस के जत्थों और स्थानीय राज्य प्रशासन द्वारा भारी सुरक्षा इंतज़ाम के बीच, एनटीपीसी के अधिकारियों ने पकरी-बरवाडीह कोयला परियोजना का सफलतापूर्वक उद्घाटन किया।

केंद्र सरकार, विशेषकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जल्द से जल्द भूमि अधिग्रहण किये जाने और मुआवज़े का भुगतान किये जाने तथा खनन परियोजना के खिलाफ उठने वाले किसी भी विरोध को कुचलने के लिए हर संभव कदम उठाने की राज्य प्रशासन को खुली छूट देने की सार्वजनिक रूप से हिमायत की है। लोगों के शांतिपूर्ण विरोध और आंदोलन को 'कानून व्यवस्था' के उल्लंघन के रूप में बदनाम करना, जिला प्रशासन की इस जन आंदोलन को दबाने और लोगों के न्यायपूर्ण दावों को ख़ारिज करने की रणनीति है। एक दशक से चले आ रहे इस आंदोलन के दौरान, सैंकड़ों असहाय गांव के निवासियों को झूठे मुकदमों में फसाया गया है, कई नेताओं पर शारीरिक हमले किये गए हैं, 'नशे में धुत' पुलिसकर्मियों ने परियोजना से प्रभावित लोगों के घरों में घुसकर उन्हें बेहरमी से मारा-पीटा है, और इसका उद्देश्य स्थानीय विरोध को ख़त्म करना और लोगों की हिम्मत को कुचलना है ताकि वे अपने अधिकारों के लिए संघर्ष न कर पाए। और यह सब कथित रूप से, एनटीपीसी अधिकारियों और त्रिवेणी सैनिक के सदस्यों के इशारे पर, राज्य और केंद्र सरकार की मिलीभगत के साथ किया जा रहा है।

निष्कर्ष

ऊपर जिन निष्कर्षों का उल्लेख किया गया गई वह सभी यह दर्शाते हैं कि एक बड़ी सरकारी बिजली कंपनी, एनटीपीसी ने खनन के लिए, अपने घर, ज़मीन, जंगल और नदियों जैसे रोज़गार के स्रोत और सांस्कृतिक धरोहरों को खोने वाले समुदायों, विशेषकर आदिवासीयों और दलितों के अधिकारों की अवहेलना की है। जब इन गतिविधियों की जानकारी सत्ता के गलियारों से निकलकर आम जनता तक पहुंची, तो इसने एक सशक्त आंदोलन को जन्म दिया, जिसकी कमान हाल ही में बने नए राज्य, झारखंड के किसानों, आदिवासियों, दलितों और समाज के हाशिये के अन्य समुदायों ने संभाली। यह आंदोलनों न सिर्फ विपक्षी पार्टियों को एकजुट करने में सफल रहा बल्कि इसने इन जन-विरोधी नीतियों को लागू करने वाले सत्ताधारियों का प्रजातांत्रिक तरीके से तख्ता पलटने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पर झारखंड राज्य तब तक नव-उदारवादी नीतियों के मोहपाश में बंध चुका था, और निवेशकों के स्वागत के लिए बाहें फैला रहा था। इन नीतियों पर सवाल उठाने की ज़रुरत है, खासतौर पर तब जब कोयला क्षेत्र को व्यावसायिक खनन के लिए खोला जा रहा है और ऐसी कंपनियों को आमंत्रित किया जा रहा है जिन्हें इससे पहले कोयला खनन का कोई तजुर्बा नहीं है।

इस अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार हैं:

1. एनटीपीसी द्वारा उत्तर करणपुरा में प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के बहुआयामी परिणाम होंगे। प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण कुछ कॉरपोरेट घरानों की मुट्ठी में होगा और पर्यावरण, रोज़गार, स्वास्थ्य, प्राकृतिक संसाधन और विवध सांस्कृतिक धरोहरों के ख़त्म होने का खतरा पैदा होगा।
2. उत्तर करणपुरा कोयला खदानों में व्यावसायिक कोयला खनन इस बात का जीता-जागता उदाहरण है कि जब मुनाफा सर्वोपरि होता जाता है, तो यह न सिर्फ

देश की राजनीति और अर्थव्यवस्था के लिए बल्कि उसके बुनियादी मूल्यों के लिए भी खतरा बन जाता है।

3. इस परियोजना से वायुमंडल में होने वाला कार्बन उत्सर्जन और बढ़ेगा, जो जलवायु परिवर्तन तथा भूमि के गर्म होने से पैदा होने वाले संकट के सामाधान की ओर योगदान देने के बजाय उसे और बढ़ाने का काम करेगा।
4. एनटीपीसी, एमडीओ और बिचौलियों या दलालों के बीच की सांठगांठ, समाज के हाशिए के समुदायों और कॉर्पोरेट कंपनियों के बीच के रिश्तों में उभर कर आ रहे एक नए चलन का उदाहरण है। यह समाज में एक नए शोषक वर्ग के उत्थान की ओर इशारा करता है, जो सामाजिक और आर्थिक रूप से हाशिए पर खड़े समुदायों की प्रगति में बाधक साबित होगा। इसलिए पर्याप्त जवाबदेही के बिना कोयला खनन हमें भविष्य में प्रगति पथ पर आगे ले जाने के बजाय कई साल पीछे धकेल सकता है।
5. देश के किसान अभूतपूर्व संकट का सामना कर रहे हैं। भूखमरी और उलटे पलायन का जो नज़ारा हमने कोविड महामारी के समय देखा, उससे साफ़ हो जाता है कि हमारे सामने जो खाद्य और रोज़गार का संकट है, उसके लिए खेती को फिर से खुशहाल बनाने की ज़रुरत है। कोयला खदानों के बढ़ते आवंटन के चलते, और ज़्यादा गांव अपनी कृषि भूमि और अपने घरों को खोने वाले हैं।
6. ऐसा प्रतीत होता है कि विकास की होड़ में सरकार, बड़े पैमाने पर हो रहे कानूनी दिशानिर्देशों के उल्लंघनों तथा पर्यावरण के अत्यधिक शोषण और विनाश को नज़रअंदाज़ कर रही है।
7. जल, जंगल और जमीन जैसे प्राकृतिक संसाधनों के शोषण और पुरातात्विक कलाकृतियों के विनाश को रोका जाना चाहिए और इस तरह के उल्लंघनों पर कार्रवाई की जानी चाहिए।

बिना पर्याप्त मुआवज़े के अपने घरों से बेघर किये गए प्रभावित समुदायों को अनिश्चितता से भरे भविष्य की ओर मजबूरन धकेला जा रहा है। धीरे-धीरे वे भी मज़दूरों के उस रेले का हिस्सा हो जाएंगे जो समाज की सबसे ख़राब नौकरियों के लिए भी एक दूसरे से संघर्ष करेगा और अपनी मेहनत को सस्ते में बेचने के लिए मजबूर हो जाएगा। इस सबकी आर्थिक कीमत होगी, जिसे न सिर्फ प्रभावित लोग चुकाने वाले हैं बल्कि पूरी अर्थव्यवस्था भी इसकी भरपाई करेगी; इस लागत को अकसर बाहरी लागत के रूप में प्रभावित लोगों के सर मढ़ दिया जाता है। यह रिपोर्ट इन लागतों की पहचान और आकलन करती है: यह समुदाय आज कितना कमाते और खाते हैं और इसकी तुलना में विस्थापन के बाद कितना कमा और खा पाएंगे; वे आज क्या पैदा (कृषि उत्पाद) करते हैं और उनका मूल्य क्या है; वे कहाँ रह रहे थे और पुनर्वास पैकेज के तहत उन्हें अब कहाँ जाने के लिए मजबूर किया जा रहा है; उनके स्वास्थ्य और रोज़गार के लिए ज़रूरी साझा संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ा है; अधिगृहित भूमि की उपजाऊ शक्ति में आई गिरावट और उसकी मौजूदा स्थिति, आदि।

कोविड-19 महामारी और डूबती अर्थव्यवस्था के बीच, कोयला खदानों को व्यावसायिक खनन के लिए खोलने के ज़रिये कोयला क्षेत्र के निजीकरण का ऐलान करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा था कि कई दशकों से लॉकडाउन में रहे कोयला खनन क्षेत्र को अब आज़ाद करने का वक़्त आ गया है। नए निवेश, बड़ी संख्या में रोज़गार के अवसर, सामजिक-आर्थिक विकास की ओर प्रगति तथा आत्मनिर्भर कोयला उद्योग के ज़रिये बाजार-आधारित अर्थव्यवस्था के वायदों के साथ शुरू किये गए इस व्यवसायीकरण को अगर आगे बढ़ाया जाता है तो ऐसे कई सबक हैं जो उत्तर करणपुरा कोयला खनन से सीखे जा सकते हैं क्योंकि यह कई मायनों में बड़े-स्तर के कोयला खनन के लिए एक मिसाल बन गया है। इस 'प्रगति' के लिए समुदायों और पर्यावरण को जो कीमत चुकानी पड़ी है उसका आकलन और मूल्यांकन इस तरह की परियोजनाओं के औचित्य के बारे में पुनर्विचार करने में हमारी मदद करेगा।